Indian J. Soc. & Pol. 05(01):151-152:2018 **ISSN: 2348-0084(PRINT)**
UGC List No. 47956 **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

उन्नीसवीं शताब्दी में दलित–उत्थान और अस्पृश्यता उन्मूलन के प्रयासों में स्वामी दयानन्द का योगदान – एक विमर्श

सीमा चौधरी[1a]
[a]एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग,जे0वी0 जैन कॉलेज, सहारनपुर,उ0प्र0 भारत

ABSTRACT

19वीं शताब्दी में हिन्दु समाज के अन्तर्गत जाति व्यवस्था में आयी विकृतियों और जटिलताओं को दूर करने तथा दलितों के उत्थान और अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए उल्लेखनीय भूमिका निभाने वाले समाज सुधारकों में एक दयानन्द प्रथम साहसी समाज सुधारक थे, जिन्होंने जन्म पर आधारित जाति–व्यवस्था और अस्पृश्यता का तीव्रतम विरोध करते हुए दलितों और अस्पृश्यों को समाज की मुख्य धारा में लाने का प्रयास किया। उन्होंने मात्र जन्म के आधार पर ब्राह्मणों की सर्वोच्च स्थिति को स्वीकार करने से इंकार कर दिया। उन्होंने वर्ण–व्यवस्था एवं आश्रम व्यवस्था को व्यक्ति और समाज के संतुलित विकास का महत्त्वपूर्ण साधन बताया। स्वामी दयानन्द द्वारा स्थापित आर्य समाज अपनी शिक्षण संस्थाओं में अछूतों और दलितों को प्रवेश दिया। वास्तव में स्वामी दयानन्द का तत्त्व चिन्तन एकांगी न होकर सर्वांगीण तथा मानवी प्रवृत्तियों के सामूहिक विकास का हित साधक था। वस्तुतः स्वामी दयानन्द ने वर्ण–व्यवस्था का समर्थन करते हुए भी जिस तरह से जन्म पर आधारित जाति–व्यवस्था और अस्पृश्यता का प्रबल विरोध किया, वह भारतीय समाज के जीर्णोद्धार के सर्वाधिक सशक्त प्रयासों में से एक था।

KEY WORDS: *व्यवहारवादी, अग्रवर्ती, एकांगी, सामाजिकता, मनुष्यकृत, जीर्णोद्धार*

"19वीं शताब्दी के सुधार आन्दोलनों में आर्य समाज के पूर्ववर्ती ब्रह्म समाज ने यद्यपि समाज सुधार की विभिन्न योजनाओं को क्रियान्वित करने का यत्न किया किन्तु जाति–प्रथा पर आघात करने की सामर्थ्य ब्रह्म समाज सुधारकों में भी नहीं थी। ब्रह्म समाज के उपासना–स्थल पर वेदपाठी ब्राह्मणों को एक पर्दे के पीछे बिठाया जाता था तथा उनमें अन्य वर्णस्थ लोगों को प्रवेश करने का अधिकार नहीं था।"(फारक्यूहर,1967 पृ034) ब्राह्मणों ने मनुस्मृति को अपने अधिकारों और विशेष स्थिति का आधार बना रखा था। दयानन्द ने मनुस्मृति से ही यह सिद्ध किया कि उत्तम विद्या और स्वभाव वाला व्यक्ति ही ब्राह्मण कहलाने योग्य होता है। "जो व्यक्ति शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण कर्म और स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र–ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाये, वैसे ही जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य कुल में उत्पन्न हुआ हो और उसके गुण, कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाये।"(मनुस्मृति10/65) उस दौर में धर्म एवं दार्शनिक चिन्तन के क्षेत्र में ब्राह्मणों को एकाधिकार प्राप्त था, जिसका दुरुपयोग वे नाना प्रकार के आव्रजनमूलक विधि निषेधों के प्रवर्तन के द्वारा कर रहे थे। सामन्त वर्ग के लोग जो क्षत्रिय वर्ण में आते थे, अपने जीवन का लक्ष्य मात्र भोग–विलास की पूर्ति एवं शारीरिक सुखोपभोगों को ही मानते थे। वैश्य समुदाय तो वैध एवं अवैध उपायों से धनोपार्जन करने तथा दलित वर्ग के श्रमिकों का शोषण और उत्पीड़न को ही अपने जीवन का चरम लक्ष्य मान बैठा था। ऐसी स्थिति में दलितों तथा समाज के पिछड़े हुए लोगों की हीन दशा का सार्वत्रिक पतन का तो अनुमान ही किया जा सकता है।(भारतीय,1978 पृ049)

वास्तव में अस्पृश्यता को सर्वथा निर्मूल करने का प्रथम क्रान्तिकारी कार्य स्वामी दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज द्वारा ही सम्पन्न हुआ। छुआछूत की तीव्र आलोचना करते हुए स्वामी दयानन्द ने घोषणा की कि वेदों में इसको कहीं स्वीकार नहीं किया गया है। आर्य समाज में अछूतों और समाज के अन्य निम्न वर्गों के वेद पढ़ने के अधिकार को स्वीकार किया और उन्हें यज्ञोपवीत धारण कराके हिन्दु समाज का सम्मानित सदस्य बनाने का प्रयास किया । सत्यार्थ प्रकाश में शूद्रों के वेदाधिकार का विवेचन करते हुए स्वामी जी लिखते हैं – "क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने–सुनने का शूद्रों के लिए निषेध और द्विजों के लिए विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शुद्रादि को पढ़ाने–सुनाने का न होता तो उनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं, वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किए हैं।"(सत्यार्थ प्रकाश,पृ069)

अछूत प्रथा का विरोध करने में स्वामी दयानन्द कितने व्यवहारवादी और निष्ठावान थे, इसका परिचय उनके जीवन की इस घटना से मिलता है – "एक दिन सुखवासी लाल साधो (जो अछूत थे) स्वामी जी के लिए कढ़ी और भात बनवाकर लाए और उन्होंने इसे खाया। इस पर ब्राह्मणों ने कहा आप भ्रष्ट हो गए जो

1: Corresponding Author

साधो के घर का भोजन खा लिया, इस पर स्वामी दयानन्द ने उत्तर दिया कि भोजन दो प्रकार से भ्रष्ट होता है, एक – यदि किसी को दुःख देकर धन प्राप्त किया जाए, दूसरा – भोजन मलिन हो या उसमें कोई मलिन वस्तु गिर जाए। साधो लोगों का परिश्रम का पैसा है, उससे प्राप्त किया हुआ भोजन उत्तम है।"(घासीराम,संवत2007पृ0134)

वस्तुतः स्वामी दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज ब्रह्म समाज आन्दोलन की भांति उग्र और मौलिक हिन्दु सिद्धान्तों का परित्याग करने वाला नहीं था और न ही थियोसोफिकल व कट्टर हिन्दु आन्दोलनों की तरह समाज में प्रचलित प्रत्येक प्रथा व रूढ़ि का अन्ध समर्थक स्वामी दयानन्द के आर्य समाज ने स्वयं को हिन्दु धर्म की मुख्य धारा से कभी अलग नहीं किया, अपितु उसने हिन्दु धर्म को, जो उस समय अपने प्राचीन वैदिक रूप को खोकर, ढ़कोसलों, छुआछूत के बन्धनों, अनेक मत–मतान्तरों, पण्डित–पुरोहितों के चंगुल में विकृत रूप धारण कर विदेशियों के उपहास का केन्द्र बन रहा था, पुनः परिष्कृत करते हुए उसके वास्तविक एवं विशुद्ध वैदिक स्वरूप का पुनः स्थापन करते हुए देशवासियों में अपनी प्राचीन संस्कृति व धर्म के प्रति गौरव व निष्ठा को जागृत किया। अतः 'काल की दृष्टि से परवर्ती होते हुए भी आर्य समाज आन्दोलन प्रभाव की दृष्टि से अन्य सब आन्दोलनों से अग्रवर्ती था।'(विद्यालंकार और विद्यालंकार 1982पृ0176) "वस्तुतः स्वामी दयानन्द और आर्य समाज का तत्त्व चिन्तन एकांगी न होकर सर्वांगीण तथा मानवी प्रवृत्तियों के सामूहिक विकास का हित साधक है। यही कारण है कि वह मनुष्य के व्यक्तिगत हित के साथ–साथ उसके समाजिक विकास की योजना भी प्रस्तुत करता है। सामाजिकता मनुष्य का एक अनिवार्य एवं अपरिहार्य गुण है। पुरातन आर्य विचारधारा भी मनुष्य की अभीष्ट प्रगति के लिए वैयक्तिकता तथा सामाजिकता के बीच सन्तुलन स्थापित करने पर जोर देती है।"(भारतीय,1978पृ048)

उन्होंने अपने उत्सवों व सम्मेलनों में सहभोज का आयोजन कर व अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन देकर राष्ट्रीय एकता स्थापित करने की ओर देशवासियों को अग्रसर किया। आर्य समाज ने अपनी शिक्षण संस्थाओं में अछूतों (हरिजन) को प्रवेश दिया और उन्हें यहाँ गायत्री–प्रार्थना, संध्या, हवन तथा वेदाध्ययन का वैसा ही अवसर प्रदान किया जैसा कि उच्च वर्णीय जातियों के छात्रों को उपलब्ध था। आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं से यह विचार निरन्तर प्रचार पाता रहा कि जाति प्रथा के समान अस्पृश्यता भी मनुष्यकृत है।(शर्मा,पृ073) धर्म से न तो जाति को मान्यता मिलती है, न अस्पृश्यता को। अस्पृश्यता को दूर करने विषयक उनके प्रयत्नों की प्रशंसा करते हुए महात्मा गाँधी ने लिखा था – "स्वामी दयानन्द ने हमारे लिए जो मूल्यवान विरासतें छोड़ी हैं, उनमें अस्पृश्यता के विरुद्ध उनकी निर्विवाद घोषणा नितान्त महत्त्वपूर्ण है।"(शारदा,1933 पृ01)

अस्पृश्यता उन्मूलन हेतु स्वामी दयानन्द के प्रबल आग्रह और जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में उदार दृष्टिकोण की प्रशंसा करते हुए रोम्या रोलां ने लिखा था – "भारत में वह एक नवयुग का निर्माण करने वाला दिन था, जब एक ब्राह्मण (दयानन्द सरस्वती) ने न केवल यह स्वीकार किया कि सब मनुष्यों को वेदों के अध्ययन का अधिकार (जिसे कट्टरपंथी ब्राह्मणों ने निषेध कर दिया था) है, प्रत्युत्त इस बात पर भी बल दिया कि उनका पढ़ना–पढ़ाना, सुनना–सुनाना भी प्रत्येक आर्य का प्रमुख धर्म है।"(रोलां,1979पृ0152) स्वामी दयानन्द के प्रयासों से जहाँ अछूतों को आर्य समाज के शिक्षण संस्थानों के माध्यम से, सरकारी शिक्षण संस्थाओं के बाहर शिक्षा का विस्तृत अवसर मिला, वहीं अछूतों और सवर्णों को एक साथ मिलकर काम करने का अवसर भी मिला तथा दोनों समूहों की पूर्व–ग्राहयताएँ कम हुई। अछूतों में आत्मविश्वास की भावना का अभ्युदय हुआ तथा उन्हें यह अनुभव हुआ कि वे भी भारतीय समाज, विशेषतः हिन्दु समाज के वैसे ही अंग हैं जैसे कि अन्य लोग और वे भी उच्च स्थिति प्राप्त कर सकते हैं, यदि वे अपने को ऊपर उठायें।

सन्दर्भ

घासीराम(संवत 2007) *महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन–चरित्र, भाग–1,* अजमेर, आर्य साहित्य मण्डल लि0, अजमेर,

शारदा, हरविलास संपा (1933) *दयानन्द कोमीमोरेशन* अजमेर, वैदिक मन्त्रालय,

मनुस्मृति (10/65), उद्धरित, सत्यार्थ प्रकाश, चतुर्थ समुल्लास,

विद्यालंकार, सत्यकेतु एवं हरिदत्त विद्यालंकार (1982) *आर्य समाज का इतिहास, प्रथम भाग,* दिल्ली, आर्य स्वाध्याय केन्द्र

भारतीय, भवानी लाल (1978) *आर्य समाज : अतीत की उपलब्धियाँ तथा भविष्य के प्रश्न,* जालंधर, आर्य प्रतिनिधि सभा,

भट्ट, गौरीशंकर (1968)*भारतीय नवजागरण प्रणेता तथा आन्दोलन,* साहित्य सदन,

रोलां रोम्या (1979) *द लाइफ ऑफ रामकृष्ण, (दसवां संस्करण)* कलकत्ता, अद्वैत आश्रम,

शर्मा, श्री राम *महात्मा हंसराज : मेकर ऑफ द मॉडर्न पंजाब,*

फारक्यूहर, जे0एन0(1967) *माडर्न रिलीजियस मूवमेण्ट्स इन इण्डिया,* दिल्ली, मुंशी मनोहरलाल,